© 2017 IJSRST | Volume 3 | Issue 7 | Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X
Themed Section: Science and Technology

भारत की लुक ईस्ट पॉलिसी 1991–2014 तक

ज्ञानप्रकाश
शोधछात्र
राजनीतिशास्त्र विभाग
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

राजनीतिक व आर्थिक दृष्टि से 1990–2000 का दशक महत्त्वपूर्ण समय रहा। सोवियत संघ के पतन के बाद वैश्विक पटल पर राज्यों के बीच अंतर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में एक क्रांतिकारी परिवर्तन का दौर शुरू हो गया। खासकर वैश्वीकरण के आने के बाद चाहे वो विकसित देश रहे हों या विकासशील। इन घटनाओं ने इन दोनों प्रकार के देशों के सामने एक नई आर्थिक चुनौती खड़ी कर दी, जल्द ही वैश्वीकरण के इस दौर ने अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर राज्यों के मध्य एक आर्थिक विकास की प्रतियोगिता शुरू कर दी साथ ही क्षेत्रीय आर्थिक संगठनों के निर्माण का दौर शुरू हो गया। वैश्विक पटल पर बदलते हुए इस आर्थिक परिदृश्य में तेजी से बढ़ती हुई अर्थ–व्यवस्था को मजबूत करने की चुनौती ने भारत के नेतृत्व को दक्षिण–पूर्वी एशियाई राष्ट्रों के निकट लाकर खड़ा कर दिया, क्योंकि दक्षिण–पूर्वी एशियाई राष्ट्र अपनी मजबूत आर्थिक विकास के चलते तत्कालीन समय में भारत की बढ़ती हुई अर्थव्यवस्था व राजनीतिक सम्बन्धों के लिए महत्त्वपूर्ण थे। इसके अतिरिक्त इन देशों के महत्व को 1940 में के0एम0 पानिककर ने पहले ही निर्धारित कर दिया था, जिसे बाद में जवाहरलाल नेहरु ने भी अपने विचारों से इस बात की पुष्टि की। वास्तव में अगर हम देखें तो भारत का प्रथम वैदेशिक सम्बन्धी राजनय दक्षिण–पूर्व एशियाई राष्ट्रों से ही रहा, जब भारत ने यहाँ उपनिवेश–विरोधी आंदोलन का समर्थन किया।

1990–91 में विश्व राजनीति के ऐसे परिदृश्य में भारत ने वैश्वीकरण को अपनाते हुए तत्कालीन भारतीय प्रधानमंत्री पी0वी0 नरसिम्हा राव ने दक्षिण–पूर्वी एशियाई राष्ट्रों के साथ आर्थिक, राजनीतिक सम्बन्धों को मजबूत करनेके लिए लुक–ईस्ट पॉलिसी अपनाई, जिसे बाद में अटल जी व मनमोहन जी के शासनकाल में मजबूती प्रदान की गई।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि–

दक्षिण–पूर्वी एशियाई राज्यो के साथ अगर हम भारत के सम्बन्धों की बात करें तो वे नए नहीं रहे हैं। अगर हम देखें तो इन सम्बन्धों का क्रमिक विकास हुआ है, जिसकी झलक हमें प्राचीनकाल से ही दिखाई पड़ती है, जहाँ प्रथम शताब्दी से ही भारत के दक्षिण–पूर्वी एशियाई राष्ट्रों के साथ मजबूत सांस्कृतिक–धार्मिक सम्बन्ध रहे हैं। चीन के रास्ते बौद्ध धर्म का प्रसार भारत से ही दक्षिण–पूर्व एशिया

IJSRST1738189 | Received : 10 Oct 2017 | Accepted 28 Oct 2017 | September-October-2017 [(3)7: 1167-1177]

में हुआ साथ ही हिन्दू धर्म का भी विस्तार हुआ। यही कारण है कि आज अनेक धर्म, संस्कृति, रीति–रिवाज, भाषाएँ भारतीय दृष्टिकोण से मिलती–जुलती हैं।

लुक–ईस्ट पॉलिसी का अध्ययन करते हुए *एस0डी0 मूनी* साहब ने इसके चार वेव या लहर माने हैं, जिनमें से प्रथम लहर वो इसे औपनिवेशिक काल के पहले का समय मानते हैं। जहाँ दक्षिण–पूर्वी एशियाई राष्ट्रों के साथ भारत के सम्बन्धों का विकास का दौर शुरू हुआ और यह दौर तकरीबन 12वीं शताब्दी तक चलता है।[1]

राजेन्द्र चोल जो एक हिन्दू शासक था। उसके शासनकाल में हिन्दू साम्राज्य मालदीव व श्रीलंका के साथ–साथ दक्षिण–पूर्व एशिया में भी फैला। दक्षिणी थाईलैण्ड, इण्डोनेशिया यहाँ तक कि मलेशिया के श्री विजया क्षेत्र में भी अपने हिन्दू साम्राज्य का विस्तार किया। इस दौरान यहाँ हिन्दू संस्कृति व हिन्दू धर्म का विस्तार हुआ, जिनके साक्ष्य आज भी हमें प्राप्त होते रहते हैं। आज भी यहाँ भगवान बुद्ध के साथ–साथ हिन्दू देवी–देवताओं की पूजा की जाती है। यहाँ आज भी हिन्दू देवी–देवताओं के मन्दिर विद्यमान हैं। कम्बोडिया का अंकोरवाट मन्दिर इसका अभिन्न उदाहरण है। इसके सिवाय नालन्दा विश्वविद्यालय ने भी दक्षिण–पूर्वी एशियाई राष्ट्रों के साथ, भारतीय सम्बन्धों को मजबूत करने में अहम भूमिका निभाई है, क्योंकि उस समय बौद्ध ज्ञान व दर्शन का नालन्दा विश्वविद्यालय एक मात्र केन्द्र था।

इसी तरह यदि हम देखें तो औपनिवेशिक काल में भी भारत (ब्रिटिश भारत) के दक्षिण–पूर्वी एशियाई राष्ट्रों के साथ सम्बन्धों का विकास हुआ। ब्रिटेन ने अपने भारतीय साम्राज्य को मजबूत करने के लिए इसे दक्षिण–पूर्व एशिया तक ले गए। हम यह कह सकते हैं कि दक्षिण–पूर्व एशिया के साथ ब्रिटिश भारत के सम्बन्ध कुछ हद तक यहाँ सामरिक हो गए थे। ब्रिटिश भारत काल में स्थापित हुए इन सम्बन्धों को एस0डी0 मूनी साहब ने लुक–ईस्ट पॉलिसी की दूसरी लहर माना है। इसी क्रम में तीसरी लहर स्वतंत्रता प्राप्ति से 1990 तक माना है जबकि चौथा उसे मानते हैं जबसे लुक–ईस्ट पॉलिसी (1991) की शुरूआत होती है।

इस तरह हम पाते हैं कि दक्षिण–पूर्व एशिया के साथ हमारे सम्बन्ध नए नहीं हैं बल्कि पहले से ही विद्यमान हैं, जिनका धीरे–धीरे क्रमिक विकास होता रहा है।

भारत की घरेलू व वैश्विक स्थिति (1990–91)–

किसी भी देश की विदेश नीति, उसके राष्ट्रीय हित पर आधारित होती है जो प्रायः उसके आंतरिक घरेलू परिस्थितियों व तत्कालीन वैश्विक परिदृश्य का परिणाम होती है। भारत की लुक–ईस्ट पॉलिसी भी इसी का परिणाम है।

सबसे पहले हम बात करेंगे भारत की घरेलू परिस्थितियों की तत्कालीन समय में भारत राजनीतिक व आर्थिक रूप से अस्थिर था। 1989–91 तक भारत में तीन सरकारें बन चुकी थीं। अनेक समस्याओं के चलते 1989 के आम चुनाव में कोई राजनीतिक स्पष्ट बहुमत नहीं पाया। यद्यपि कांग्रेस सबसे बड़ी पार्टी थी किन्तु उसने सरकार बनाने से मनाकर दिया। फलस्वरूप वी0पी0 सिंह ने भाजपा + CPM के समर्थन से अपनी सरकार बनाई किन्तु बढ़ती हुई आर्थिक समस्याओं से निपटने के लिए सरकार कोई खास नीति नहीं अपना पाई जिस कारण आर्थिक समस्या और बढ़ती चली गई और 1990 में भाजपा के समर्थन वापस लेने से राष्ट्रीय मोर्चा की सरकार का पतन हो जाता है। इसके बाद जनता दल का बंटवारा हो जाता है और चन्द्रशेखर अपनी नई समाजवादी जनता पार्टी का निर्माण करते हैं और कांग्रेस के समर्थन से प्रधानमंत्री बनते हैं। किन्तु तकरीबन 8 महीने तक ही इनकी सरकार रहती है और कांग्रेस के समर्थन वापस लेने से इनकी सरकार का भी पतन हो जाता है। तत्पश्चात आम चुनाव होते हैं 1991 में और कांग्रेस कुछ क्षेत्रीय पार्टियों की सहायता से पी0वी0 नरसिम्हा राव के नेतृत्व में सरकार का निर्माण करती है।[2]

1984 में आपरेशन ब्लूस्टार व उसके बाद इंदिरा गाँधी की हत्या के चलते देश में काफी अशांति उत्पन्न हो गई। जगह–जगह विद्रोह की घटनाएँ शुरू होने लगीं। 1990 तक आते–आते जम्मू–कश्मीर, पंजाब में आंतरिक विद्रोह होने शुरू हो गए। जम्मू–कश्मीर में पाकिस्तान इन आतंकवादी गतिविधियों को सपोर्ट करता था। यहाँ अब तक पाकिस्तान पूरी तरह से भारत विरोधी नीतियाँ अपनाये रहा था, जिसका परिणाम बाद में कारगिल युद्ध हुआ। यद्यपि सिंधी आंदोलन पाकिस्तान में भी शुरू हो चुके थे। पूर्वोत्तर भारत में भी कुछ ऐसा ही अशांति का माहौल बन रहा था। वहाँ के विद्रोही अपनी शरणस्थली म्यांमार को बनाये हुए थे, जिससे भारत सरकार को और परेशानी उठानी पड़ रही थी। इसी समय भारत के सीमावर्ती राष्ट्र में होने वाली गतिविधियाँ भी भारत की आंतरिक राजनीति को प्रभावित कर रही थीं। जैसे बांग्लादेश में चकमा लोगों का आंदोलन, नेपाल में तराई क्षेत्र के लोगों का पहाड़ी क्षेत्रीय लोगों के बीच, भूटान में नेपाली लोगों का वहीं श्रीलंका में तमिल लोगों का आंदोलन। ये सभी घटनाएँ तत्कालीन भारतीय राजनीति को प्रभावित कर रही थीं।

भारत के आर्थिक परिदृश्य की बात हम करें तो तत्कालीन भारतीय अर्थव्यवस्था भी डगमगा सी रही थी। राजीव गाँधी के सुधारों के बावजूद भारतीय जी0एन0पी0 1984–85 में 12.4 प्रतिशत के मुकाबले 1988–89 में 11 प्रतिशत रही। उधर खाड़ी संकट की वजह से तेल के दामों में भी वृद्धि हुई। कुवैत, ईराक से आने वाली विदेशी मुद्राओं में नुकसान हुआ। तकरीबन 112 मिलियन यू0एस0 डॉलर के मूल्य–व्यापार का नुकसान भारत को ईराक व कुवैत से हुआ।[3]

आखिरकार 1990 तक आते–आते भारतीय अर्थव्यवस्था भुगतान संतुलन की विपदा में फँस गई। फलस्वरूप भारत सरकार में 1991 में आईएमएफ से 1.8 बिलियन डॉलर का एग्रीमेंट करना पड़ा।

ये तो बात हुई भारत के कुछ आंतरिक, आर्थिक व राजनीतिक हालातों की, अब बात करते हैं तत्कालीन वैश्विक परिदृश्य की, जिसने भारत को लुक–ईस्ट पॉलिसी की तरफ अग्रसर किया। 1989–91 के दौरान चार मुख्य वैश्विक घटनाएँ हुईं–

1. सोवियत संघ पतन।
2. शीतयुद्ध की समाप्ति जिसने भारतीय विदेश नीति को काफी प्रभावित किया।
3. खाड़ीयुद्ध।
4. वैश्वीकरण।

शुरू करते हैं हम सोवियत संघ के पतन से। सोवियत संघ का पतन एक मुख्य वैश्विक राजनीतिक घटना थी जिसने न केवल भारत को प्रभावित किया वरन पूरी विश्व राजनीति इससे प्रभावित हुई। अब विश्व द्विध्रुवीय के बजाय एक ध्रुवीय हो चुका था और अमेरिका का वर्चस्व कायम हो चुका था। भारत की बात अगर हम करें तो भारत उससे काफी प्रभावित हुआ। भारत को इससे राजनीतिक, सामरिक व आर्थिक रूप से काफी नुकसान हुए। आर्थिक दृष्टि से हम बात करें तो भारत का सोवियत संघ से लगभग हर क्षेत्र में भरपूर व्यापार था, खासकर तेल। खाड़ी संकट के बाद आया तेल संकट, सोवियत संघ के पतन के बाद और बढ़ गया। सामरिक रूप से सोवियत संघ भारत को सबसे अधिक हथियारों का निर्यात करता था जो अब सम्भव नहीं रहा। परिणामस्वरूप भारत की सामरिक नीति प्रभावित होने लगी। इसके अतिरिक्त राजनीतिक रूप से सोवियत संघ भारत का अब तक विश्वसनीय मित्र रहा है जिसने हर राजनीतिक मुद्दे पर भारत का साथ दिया है। चाहे वो संयुक्त राष्ट्र संघ में भारत के सपोर्ट का हो या फिर जम्मू–कश्मीर के मसले पर। हम कह सकते हैं कि इसके बाद निशस्त्रीकरण, शस्त्रीकरण व जम्मू कश्मीर मसले पर भारत के ऊपर काफी हद तक अंतर्राष्ट्रीय दबाव बनने लगे थे।

ऐसी स्थिति में भारत को प्राकृतिक संसाधनों व ऊर्जा से भरपूर दक्षिण–पूर्व एशियाई राष्ट्र जैसे म्यांमार, बुनेई, इण्डोनेशिया आदि की तरफ देखना स्वाभाविक हो गया।

सोवियत संघ के पतन के साथ दूसरी वैश्विक घटना शीत युद्ध की समाप्ति हुई, जिसने भारत को अपनी नीतियों में बदलाव करने का अवसर दिया। शीत युद्ध के दौरान भारत चाहकर भी इन दक्षिण–पूर्वी एशियाई राष्ट्रों के साथ अपने सम्बन्धों को मजबूत नहीं बना सका, क्योंकि ये राष्ट्र शीत युद्ध के दौरान दो विचारधाराओं का युद्ध स्थल बने हुए थे। इसी क्रम में 1967 में आसियान की

स्थापना भी हुई। चूंकि भारतीय विदेश नीति गुट–निरपेक्षता पर आधारित थी इसलिए शीत युद्ध के दौरान इस क्षेत्र से अलग रहना भारत की मजबूरी बनी हुई थी और सोवियत संघ के पतन के बाद जब शीत युद्ध की समाप्ति हुई तो भारत के लिए इसने दक्षिण–पूर्व एशिया के लिए द्वारा खोल दिए।

तीसरी प्रमुख घटना थी खाड़ी युद्ध, जिसने तेल के सम्पूर्ण व्यापार जगत को प्रभावित किया। यद्यपि भारत भी इसका अपवाद नहीं रहा। फलस्वरूप भारतीय अर्थव्यवस्था पर इसका व्यापक प्रभाव पड़ा और हम कह सकते हैं कि यहाँ से भारतीय अर्थव्यवस्था मंदी की तरफ अग्रसर हुई।

इस सबके अतिरिक्त राज्यों का वैश्वीकरण की तरफ बढ़ना एक प्रमुख कारण रहा भारतीय विदेश नीति में बदलाव लाने का। वैश्वीकरण के बाद विश्व खुली अर्थव्यवस्था की तरफ अग्रसर हुआ। यहाँ राज्य की विदेश नीतियाँ सैन्य शक्ति पर आधारित न होकर आर्थिक शक्ति पर आधारित होने लगीं। ऐसे में भारत के लिए भी जरूरी हो गया था कि वो अपनी अर्थव्यवस्था को खुली अर्थव्यवस्था की तरफ अग्रसर करे।

हम कह सकते हैं कि इन सभी तत्वों ने भारत को लुक–ईस्ट पॉलिसी अपनाने में काफी अहम भूमिका निभाई है। पर यहाँ सवाल यह भी उठता है कि ऐसी स्थिति में भारत ने दक्षिण–पूर्व एशिया की तरफ ही क्यों रूख किया? इसके लिए उपरोक्त तथ्यों के अलावा कुछ अन्य तथ्य भी उत्तरदाई रहे हैं। पहला उस समय दक्षिण–पूर्व एशियाई राष्ट्र या हम कहें आसियान राष्ट्रों की अर्थव्यवस्था बड़ी तेजी से बढ़ रही थी। एशियन टाइगर्स बड़ी तेजी से विकास कर रहे थे। ऐसे में भारत के नीति–निर्धारकों को अपनी अर्थव्यवस्था को मजबूत करने के लिए आसियान राष्ट्रों के साथ सम्बन्ध बनाने के लिए प्रेरित किया। दूसरा, दक्षिण एशियाई राज्यों के द्वारा अपनी अर्थव्यवस्था को मजबूत करने के लिए जिस सार्क संगठन की स्थापना की गई थी उससे कोई खास वृद्धि नहीं हुई। वो आपसी झगड़ों के लिए एक मंच बनकर रह गया था। ऐसे में आसियान की तरफ देखना जिसकी अर्थव्यवस्था काफी तेजी से वृद्धि कर रही थी, भारत के लिए अनिवार्य बन चुका था। इस सबके अलावा दक्षिण–पूर्व एशिया के ये सभी राष्ट्र प्राकृतिक संसाधनों से भरपूर थे, जो तत्कालीन भारत की सबसे अधिक आवश्यकता थी। दूसरी तरफ इस क्षेत्र को अपनाना भारत के लिए सामरिक रूप से भी महत्त्वपूर्ण था क्योंकि चीन यहाँ निरंतर अपनी शक्ति में वृद्धि कर रहा था जिसे संतुलित करना भारत की एक अघोषित नीति थी।

भारत की दक्षिण–पूर्व एशियाई नीति (1947–190)–

लुक–ईस्ट पॉलिसी से पहले हम यहाँ थोड़ा स्वतंत्रता के बाद 1990 तक भारत की दक्षिण–पूर्व एशिया की नीति का संक्षेप में अवलोकन करेंगे। भारत स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद और 1990 तक भारत की दक्षिण–पूर्व एशिया नीति उतार–चढ़ाव पूर्ण रही है। हम कह सकते हैं कि इस काल

के दौरान भारतीय सम्बन्ध काफी हद तक पिछड़े हुए की स्थिति में रहे हैं। जैसा कि ज्ञातव्य है कि जवाहरलाल नेहरु एफ्रो–एशिया एकता में विश्वास रखते थे और इसी क्रम में वे दक्षिण–पूर्व एशिया से अपने सम्बन्धों को मजबूत करने के इच्छुक थे। अप्रैल 1947 में नइ दिल्ली में 25 एशियन देशों का सम्मेलन हुआ जिसमें इजिप्ट देश भी शामिल था। क्षेत्रीय सहयोग की तरफ उठने वाला ये एक महत्त्वपूर्ण कदम था। इसके बाद भारत ने इण्डोनेशिया मुद्दे पर एक सम्मेलन बुलाया जो जनवरी 1949 में सम्पन्न हुआ। जो भारत की दक्षिण–पूर्वी एशियाई नीति को प्रदर्शित करती है। इस क्रम में हम बांडुग सम्मेलन 1955 को रख सकते हैं यद्यपि वो अफ्रीकी–एशियाई एकता व सहयोग पर आधारित था। नेहरु ने अपने शासन के दौरान एशियाई एकता का भरसक प्रयास किया किन्तु ये ज्यादादिन तक सफल नहीं रहा। कारण 1962 व 1965 में क्रमशः चीन व पाकिस्तान से युद्ध हुए जिससे एशियाई एकता, नेहरु का एक सपना ही रह गया। दूसरा अब तक शीत युद्ध अपने चरम पर था और दक्षिण–पूर्व एशिया शीत युद्ध का एक तरह से युद्ध स्थल बन चुके थे। लाओस, कम्बोडिया, वियतनाम को छोड़ इस क्षेत्र के प्रमुखतया सारे राष्ट्र पश्चिमी समर्थक हो गए थे। इसी संदर्भ में साम्यवादी विचारधारा के विरोध में 1967 में आसियान की भी स्थापना हुई। चूंकि भारतीय विदेश नीति गुट–निरपेक्षता की नीति पर आधारित थी इसलिए ऐसी स्थिति में इन राष्ट्रों से सम्बन्ध बनाना भारत के लिए थोड़ा मुश्किल हो गया। उधर 1965 के युद्ध में इण्डोनेशिया के सुकर्णों ने भारत के विपरीत पाकिस्तान का सपोर्ट किया जिससे इण्डोनेशिया और भारतीय सम्बन्धों में तनाव हुआ। यद्यपि नेहरु जी ने अपने शासन के दौरान दक्षिण–पूर्व एशिया से मजबूत सम्बन्ध बनाने की भरपूर कोशिश की पर ऐसा हो न सका। एक तरह हम कह सकते हैं कि इस दौरान भारत की सम्पूर्ण विदेश नीति महाशक्तियों पर या उसके आसपास तथा विश्व शांति व गुट–निरपेक्षता पर केन्द्रित रही है। जबकि उसका एक बड़ा हिस्सा पाकिस्तान की चुनौतियों का सामना करने में बीता।

शास्त्री जी के काल में हम कह सकते हैं कि भारतीय विदेश नीति में कोई खास प्रगति नहीं हुई और दक्षिण–पूर्व एशिया से भारतीय सम्बन्ध पहले जैसे ही बने रहे।

1967 में आसियान संगठन की स्थापना हो चुकी थी। यद्यपि अब तक भारत की पहचान यहाँ एक बाहरी देश के रूप में की भी जा रही थी। इंदिरा गाँधी के शासनकाल में भी दक्षिण–पूर्व एशिया से भारतीय सम्बन्धों में कुछ खास वृद्धि नहीं हुई। हम पाते हैं कि इंदिरा गाँधी लगभग सम्पूर्ण शासन में विशाल दुर्भिक्ष, विदेशी मुद्रा संकट व कांग्रेस पार्टी के अंदरूनी संकट से जूझती रही है। इसके अतिरिक्त भारत के आंतरिक मामलों में काफी हद तक उलझी रहीं। यद्यपि 1971 में बांग्लादेश मुक्ति अभियान में भारत के अंतर्राष्ट्रीय महत्व को बढ़ाया किन्तु दक्षिण–पूर्व एशिया

से हमारे सम्बन्ध जैसे के तैसे बने रहे। वहीं 1976 में चीन के साथ सम्बन्धों में सामान्यीकरण की प्रक्रिया शुरू होती है।

1979 में चीन द्वारा वियतनाम पर आक्रमण करना भारत के हित में रहा क्योंकि यहाँ से भारत वियतनाम के नजदीक आया। यह वही समय था जब अटल जी चीन के दौरे पर थे। वहीं कम्बोडिया में हेंगसामरिन सरकार को मान्यता देने के प्रश्न में भारतीय विदेश नीति की दूरदर्शिता देखने को मिलती है। यहाँ भारत दक्षिण–पूर्व एशिया के थोड़ा नजदीक आया।

1984 में राजीव गाँधी प्रधानमंत्री बनते हैं। यद्यपि इस सरकार ने आंशिक रूप से ही दक्षिण–पूर्व एशिया से सम्बन्ध बनाने के प्रयास किए बावजूद इसके सरकार अपने अधिकांश समय तक तमिल समस्या में ही उलझी रही।

1990 तक आते–आते भारत में राजनीतिक रूप से थोड़ी अस्थिरता आ जाती है और 1989–91 के अंदर तीन प्रधानमंत्री बनते हैं। इसी समय सोवियत संघ का पतन व शीत युद्ध की समाप्ति होती है। जिसने भारत ही नहीं वरन सम्पूर्ण वैश्विक राजनीति को प्रभावित किया। इन वैश्विक परिदृश्य, साथ ही साथ अपने कुछ निजी समस्याओं के फलस्वरूप भारत ने 1991 में पी0वी0 नरसिम्हा राव के शासनकाल में दक्षिण–पूर्व एशिया के संदर्भ में एक नई विदेश नीति 'लुक–ईस्ट पॉलिसी' की नींव रखी।

लुक–ईस्ट पॉलिसी (1991–2014)–

लुक–ईस्ट पॉलिसी या पूरब की ओर देखो की नीति की शुरूआत 1991 में प्रधानमंत्री पी0वी0 नरसिम्हा राव के काल में हुई जब मनमोहन सिंह तत्कालीन वित्तमंत्री थे।

पूरब की ओर देखो नीति का तात्पर्य भारत के पूर्व में स्थित देशों के साथ व्यापक स्तर पर आर्थिक, व्यापारिक, सांस्कृतिक व राजनीतिक सम्बन्धों का विकास करना है। यहाँ पूर्व का तात्पर्य उन देशों से है जो भारत देश के पूरब में स्थित हैं। इन देशों में प्रमुख हैं– म्यांमार, थाईलैण्ड, सिंगापुर, दक्षिण कोरिया, उत्तर कोरिया, लाओस, कम्बोडिया, वियतनाम, फिलीपींस, इण्डोनेशिया, मलेशिया, जापान आदि। व्यापक अर्थों में आस्ट्रेलिया व न्यूजीलैण्ड को भी पूर्व की परिभाषा में सम्मिलित कर लिया जाता है, क्योंकि इस क्षेत्र में इन देशों की महत्त्वपूर्ण सामरिक व आर्थिक भूमिका है। इस क्षेत्र के देशों को भारत के विस्तृत पड़ोस की संज्ञा दी जाती है।[4]

1991 के समय में लुक–ईस्ट पॉलिसी अपनाने के वैश्विक हलचलों के साथ–साथ कई अन्य कारण भी रहे हैं। जिसमें दो प्रमुख कारण थे, प्रथम आसियान के साथ सम्बन्धों को बढ़ावा देना तथा दूसरा उस क्षेत्र में चीन की बढ़ती हुई शक्ति को संतुलित करना। यहाँ पर भारत के लिए सकारात्मक बात यह रही थी कि दक्षिण–पूर्व एशिया के इन राष्ट्रों ने इस वास्तविकता को स्वीकार किया कि

भारत की बड़ी आर्थिक व सैनिक शक्ति इस क्षेत्र में चीन की बढ़ती हुई आर्थिक व सैनिक शक्ति को संतुलित करने का कार्य करेगी।

यहाँ से भारत की लुक–ईस्ट पॉलिसी को हम दो चरणों में विभाजित कर सकते हैं। प्रथम 1991–2003, दूसरा 2003 से मई 2014 तक।

लुक–ईस्ट नीति के प्रथम चरण में भारत ने दक्षिण–पूर्वी एशियाई राष्ट्रों के साथ अपने राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, वैश्विक आदि समबन्धों को बढ़ावा दिया। 1992 में भारत आसियान का आंशिक वार्ताकार बना तथा 1996 में भारत को उसका पूर्ण वार्ताकार का दर्जा प्राप्त हुआ। सुरक्षा के क्षेत्र में आसियान द्वारा 1994 में आसियान क्षेत्रीय मंच की स्थापना की गई और 1996 में भारत इसका सदस्य बन गया।

इसी सन्दर्भ में एशियाई एकीकरण की दृष्टि से 1997 में बिम्सटेक की स्थापना की गई, जो दक्षिण–एशिया तथा दक्षिण–पूर्व एशिया के बीच एक पुल का काम करता है। 1999 में बी0सी0आई0एम0 की स्थापना की गई। भारत व आसियान सम्बन्धों को मजबूत करने के लिए 2000 ई0 में मेकांग–गंगा सहयोग पहल की शुरूआत की गयी। जिसमें भारत के साथ–साथ दक्षिण–पूर्व एशिया के 5 राष्ट्रों थाईलैण्ड, वियतनाम, कम्बोडिया, लाओस व म्यांमार ने हस्ताक्षर किए। इसके अतिरिक्त आसियान–भारत व्यवसाय परिषद व आसियान–भारत संयुक्त सहयोग परिषद की भी स्थापना की गई। विकास, विज्ञान एवं तकनीकी व्यापार एवं निवेश के क्षेत्रों में सहयोग करना इसका उद्देश्य था। 2001 में आसियान + 1 (भारत) भारत आसियान शिखर सम्मेलन की शुरूआत की गई जिसका प्रथम सम्मेलन 2003 में हुआ। भारत आसियान मुक्त व्यापार वार्ता इसी दौरान शुरू हुई किन्तु 2009 में पूर्णरूप से सम्पन्न हो पाई।[5]

लुक–ईस्ट पॉलिसी के इस चरण में हम कह सकते हैं कि भारत–आसियान के बीच राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, शैक्षिक सम्बन्धों का विकास तीव्र गति से हुआ।

2003 में लुक–ईस्ट पॉलिसी अपने दूसरे चरण में प्रवेश करती है। आधिकारिक तौर पर इसकी घोषणा 4 सितम्बर 2003 को भारत–आसियान व्यापार शिखर सम्मेलन में किया गया। जब भारतीय विदेश मंत्री यशवंत सिन्हा ने कहा कि लुक–ईस्ट की नीति ने अब द्वितीय चरण में प्रवेश किया है। इसके प्रथम चरण में जहाँ आसियान राष्ट्रों के साथ आर्थिक व्यापार व निवेश सम्बन्धों पर ध्यान केन्द्रित किया वहीं द्वितीय चरण में लुक–ईस्ट के अपने मूल रूप में आसियान के साथ–साथ चीन व पूर्वी एशिया तथा आस्ट्रेलिया के साथ आर्थिक मुद्दों के साथ सामरिक मुद्दों पर ध्यान दिया जायेगा। इस चरण में भारत सामरिक सम्बन्धों के क्षेत्र में विशेष ध्यान दिया। 2005 में यूरोपियन संघ की तर्ज पर ईस्ट एशिया सम्मिट की स्थापना की गई जिसमें भारत संस्थापक देशों में शामिल रहा।

2005 में मलेशिया की राजधानी क्वालालम्पुर में इसका प्रथम शिखर सम्मेलन हुआ। इस चरण में आसियान के साथ–साथ उनके राष्ट्रों के साथ द्विपक्षीय सम्बन्धों को भी बढ़ावा दिया गया। 2009 में मुक्त व्यापार समझौता भारत आसियान सम्बन्धों की एक महत्त्वपूर्ण सफलता थी। 1990 में दोनों के मध्य कुल व्यापार 22.2 मिलियन डॉलर था जो कि 2009 में बढ़कर 40 मिलियन डॉलर हो गया। 1980 में भारत के कुल निर्यात में आसियान का हिस्सा 3.6 प्रतिशत था जो 2010 में बढ़कर 6 प्रतिशत हो गया। सुरक्षा व सामरिक सम्बन्धों को भी इस चरण में मजबूती मिली, जो इस चरण का मुख्य उद्देश्य था। भारत आसियान देश 1990 से संयुक्त सैनिक अभ्यास कर रहे हैं। अब द्विपक्षीय रूप से भी सैनिक अभ्यास हो रहे हैं। समुदी मार्गों की सुरक्षा, बढ़ती डकैतियों, आतंकवाद आदि पर सहयोग को बढ़ावा और दक्षिण चीन सागर में समुद्री आवागमन की सुरक्षा पर जोर दिया गया। इस सम्बन्ध में भारत ने आसियान देशों के साथ–साथ जापान व आस्ट्रेलिया के साथ अपने सामरिक सम्बन्धों को मजबूत किया है। भारत ने आसियान के साथ अपनी कनेक्टीविटी को मजबूत करने पर बल दिया है। इस सम्बन्ध में भारत के पूर्वोत्तर राज्य एक प्रवेश द्वार की भूमिका में आ जाते हैं। गंगा–मेकांग समझौता, एशियन हाइवे प्रोजेक्टस, इंडिया–म्यांमार–थाईलैण्ड हाइवे प्रोजेक्ट आदि के माध्यम से भारत आसियान राष्ट्रों से अपनी कनेक्टिविटी बढ़ा रहा है। वहीं कालादान प्रोजेक्ट से कलकत्ता बंदरगाह को सिटवे (म्यांमार) बंदरगाह तक जोड़ने की बात की गई है।

लुक–ईस्ट पॉलिसी अपने इस चरण में 2003 से 2014 तक जारी रहती है जब तक प्रधानमंत्री आधिकारिक रूप से एक्ट ईस्ट पॉलिसी की शुरूआत नहीं कर दते हैं। इस चरण में लुक–ईस्ट पॉलिसी थोड़े–बहुत उतार–चढ़ाव के साथ भारत आसियान के मध्य राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, शैक्षिक सम्बन्धों के साथ सामरिक सम्बन्धों को भी मजबूत किया।

निष्कर्ष–

भारत की लुक–ईस्ट पॉलिसी 1990 की विश्व राजनीति के हलचलों व भारत की तत्कालीन आर्थिक व राजनीतिक आवश्यकताओं का परिणाम थी। भारत की पूर्व की ओर देखो नीति का तात्पर्य केवल एशियाई देशों के साथ सम्बन्ध स्थापित करने से ही नहीं है बल्कि उनके साथ–साथ दक्षिण कोरिया, आस्ट्रेलिया व न्यूजीलैण्ड भी शामिल है।

1996 में इन्द्र कुमार गुजराल ने स्पष्ट करते हुए कहा कि– What Look East realy mean is that an outward looking india is gathering all forces of dynamism, domestic and regional and is directly focusing on establesling Synergies with a fast consolidating and progressive nighbourhood to its east in mother continent in Asia.[6] बाद में प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने कहा कि– India's Look East

Policy is not mearely an external economic policy. It is also a strategic shift in India's vision of the world and idia's palace in the evolving global economy, most of all it is about reaching out to our civilizations nighbours in south east Asia and east Asia.[7]

इस तरह से हम देखते हैं कि भारत के पूर्व के प्रधानमंत्रियों ने पूर्व की ओर देखो नीति को स्पष्ट किया है और जिन उम्मीदों व आशाओं के साथ इसे अपनाया गया था उसे पूरा करने में काफी हद तक सफल रहे हैं। यद्यपि लुक–ईस्ट पॉलिसी के दूसरे चरण में थोड़ी–बहुत शिथिलता आई। इसी के परिणामस्वरूप हम कह सकते हैं कि मई 2014 में भारतीय प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने इसके अगले चरण या इसके परिवर्तित स्वरूप एक्ट ईस्ट पॉलिसी की शुरूआत की। नरेन्द्र मोदी ने भारत आसियान के 12वें शिखर सम्मेलन में एक्ट ईस्ट पॉलिसी की शुरूआत की। सामरिक रूप से भारत की यह एक महात्वाकांक्षी विदेश नीति की शुरूआत है। जहाँ समस्याओं के साथ काफी सम्भावनाएँ भी विद्यमान हैं और अगर भारत इस नीति को सही ढंग से संचालित करता रहा तो यह भारतीय विदेश नीति की बहुत बड़ी सफलता होगी।

सन्दर्भ ग्रन्थ–

1. S.D. Muni, , India Look East Policy : The strategic ISAS working paper, No.-121, 1 Feb. 2011.
2. Thongkholal Haokip, India Look East Policy : Its Evolution and approach South Asian Servey, 18(2), 239-257, 2011, Sage Publications.
3. Ibid.
4. अरुणोदय बाजपेयी, समकालीन विश्व एवं भारत : प्रमुख मुद्दे एवं चुनौतियाँ, पियर्सन प्रकाशन पृ0 105–108
5. वही, पृ0 108–117
6. Thongkholal Haokip, India Look East Policy : Its Evolution and approach South Asian Servey, 18(2), 239-257, 2011, Sage Publications.
7. Dr. A. Sundaram, Look East Policy, International Journal of Advancements in Research and Technology, Volume-2, Issue-5, May-2013.

8. Rajiv Sikiri, Challenge and Strategy : Rethinking India's Foreign Policy, pp 112-129.
9. World Focus, March 2017.
10. जे0एन0 दीक्षित, भारतीय विदेश नीति, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, 2012, पृ0 202–232